International Journal of Hindi Research
ISSN: 2455-2232
Impact Factor: RJIF 5.22
www.hindijournal.com
Volume 3; Issue 5; September 2017; Page No. 01-05

महाकवि कालिदास का मानव जीवन एवं प्राकृतिक वर्णन का तुलनात्मक अध्ययन

किरण यादव
पीएच.डी. विद्वान, संस्कृत विभाग, जे.एस. विश्वविद्यालय, शिकोहाबाद, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

महाकवि कालिदास के जीवन के विषय में कोई भी प्रमाणिक तथ्य प्राप्त नहीं होते हैं। उन्होंने स्वयं के विषय में कुछ नहीं लिखा, जो भी हमें प्राप्त होता है वह अनुमान मात्र है। उनके विषय में अनेक किवदंन्तियाँ प्रचलित हैं, एक प्रचलित कथा के अनुसार वे महामूर्ख थे। एक सुयोग्य कलाविद राजकुमारी से पराजित एवं अपमानित कुछ विद्वानों ने कालिदास के साथ राजकुमारी का कपट पूर्वक विवाह करा दिया। पत्नी से अपमानित कालिदास ने देवी भगवती की आराधना की तथा वरदान में कवित्व प्राप्त किया। घर वापस आने के बाद कालिदास ने पत्नी से कहा – ''अनावृतं कपाटं द्वारं देहि''। पत्नी ने पति की आवाज सुनकर कहा – ''अस्ति कश्चिद् वागविशेषः'' इन्हीं शब्दों को सुनकर कालिदास ने तीन काव्यों की रचना की – अस्ति शब्द सुनकर कुमारसम्भवम् जिसका प्रथम श्लोक अस्ति से प्रारम्भ होता है – ''अस्त्युत्तरस्यां दिशि देवात्मा'' कश्चित शब्द से मेघदूत जिसका प्रथम श्लोक ''कश्चित्कान्ता विरह गुरूणा'' तथा वाग शब्द से रघुवंराम जिसका प्रथम श्लोक वागर्थाविव संप्रक्तौ लिखकर रचना की।

महाकवि कालिदास संस्कृत साहित्य विश्वविख्यात कवि हैं, जिन्होंने नाट्य एवं काव्य दोनों में ख्याति अर्जित की है। इन्होंने रघुवंशम् और कुमारसम्भवम् दो महाकाव्य, मेघदूत और ऋतुसंहार दो खण्डकाव्य, तथा मालविकग्नि मित्रम, विक्रमोवर्शीयम् एवं अभिज्ञान शाकुन्तलम् तीन नाटकों की रचना की है। इन सभी नाटकों में महाकवि कालिदास प्रकृति का अत्यन्त ही अतुलनीय वर्णन किया। क्योंकि–

सम्भवतः संसार में कोई भी ऐसा व्यक्ति होगा जिसने इस सजीव प्रकृति का इतना गहन स्थूल एवं सूक्ष्म अध्ययन किया हो, जितना कि महाकवि कालिदास ने किया है। उनमें (मानव हृदय का कवि) और (प्राकृतिक सौन्दर्य का कवि दोनों विद्यमान हैं) महाकवि ने प्रकृति को आलम्वन, उद्दीपन, मानवीकरण एवं अलंकारिक आदि रूपों में प्रस्तुत किया है। ऋतुसंहार खण्डकाव्य महाकवि की प्रथम रचना है, इसके नाम से ही इस बात का द्योतक है कि इसमें उन्होंने प्रकृति की सभी ऋतुओं की विवेचना की है। मेघदूत में तो कवि ने मेघ को ही अपनी प्रसंसी तक संदेशा पहुंचाने का साधन बनाया है। ठीक उसी प्रकार मनुष्य और प्रकृति एक दूसरे के पूरक हैं, जिस प्रकार शरीर और आत्मा का दोनों का परस्पर से आदान–प्रदान निरन्तर चलता रहता है। अभिज्ञान शकुन्तलम् में तो महाकवि ने वृक्ष और लताओ को ही शकुन्तला का भ्राता और भगिनी माना है। और शकुन्तला भी इन पेड़ पौधों एवं वन्य जीवों को अपना भाई बहन मानती है जो निम्न वार्तिक से स्पष्ट होता है–

''अस्ति में सोदरस्नेहोऽत्येतेषु''।

1,48वां श्लोक

महाकवि ने प्रकृति और मनुष्य को एक प्रेममयी बन्धन में प्रदर्शित किया है, क्योंकि महर्षि कण्व की पुत्री तथा आश्रम से पली बढ़ी शकुन्तला को प्रकृति पुत्री माना है। प्रकृति की नैसर्गिक शुषमा में जो रस और आनन्द है वह उसके कृत्रिम स्वरूप में नहीं है, अतएव यह निसर्ग सुन्दरी शकुन्तला असाधारण और रमणीय है –

शुद्धान्त दुलर्भ वपुराश्रमवादिनों यदि जनस्य।
छुरीकृता खलु गुणैरूद्यानलता वन लताभि।।

अभि.शा.(1–17)

राजा दुष्यन्त ध्यानपूर्वक शकुन्तला को देखकर कहते हैं कि इसका रूप अत्यन्त मनोहर है ''अन्तःपुर में यह दुलर्भ (अति मनोहर) शरीर यदि किसी आश्रम वासी व्यक्ति का है तो अवश्य ही इस उपवन की लताओं के (सुन्दर, सुकुमारता आदि) गुणों का वर्णन है।

राजा दुष्यन्त मृगों की दृष्टि में शकुन्तला की सुन्दरता देखता है, इसीलिए वह उस मृग का वध नहीं करता है। उस मृग को देखकर राजा दुष्यन्त के मन में इस प्रकार के भाव है जो इस प्रकार है –

न नमयितुमधिज्यमस्मि शक्तो,
धनुरिदमाहितसायकं मृगेषु।
सहवसतिमुपेत्य यैः प्रियायाः
कृत दवू मुग्ध विलोकितोपदेशः।।

अभि.शा.(2–3)

अर्थात् मन में यह भाव रखते हुए राजा दुष्यन्त शकुन्तला को स्मरण करने के कारण प्रत्यंचा चढ़े हुए और बाण रखे हुए इस धनुष को मृगों पर चलाने में समर्थ नहीं है। क्योंकि वह सोचता है मानो इन मृगों ने हमारी प्रेयसी शकुन्तला को सुन्दरता पूर्वक देखना सिखाया हो। अतः वह इन मृगों पर बाण नहीं चलाने में असमर्थ है। यहां पर किस प्रकार महाकवि ने पशु एवं मनुष्य में आत्मीयता का सम्बन्ध प्रस्तुत किया गया है।

महाकवि ने अभिज्ञान शाकुन्तलम् की नायिका शकुन्तला को परिलक्षित करके कहते है कि शकुन्तला को प्रकृति से अलग करके नहीं देखा जा सकता, उसके समर्थन में प्रकृति ने अपना महत्वपूर्ण योगदान दिया है। जब शकुन्तला उत्पन्न होती है तो उसके माता पिता उसे महर्षि कण्व के आश्रम में छोड़कर चले जाते हैं, तब उनका पालन पोषण महाकवि कण्व के आश्रम एवं पेड़ पौधों, पशु पक्षियों और पुष्प लताओं के संसर्ग में होता है। इस कारण शकुन्तला के हृदय में प्रकृति तथा आश्रम से सम्बन्धित विषयों के प्रति अटूट प्रेम है। मानों उसने वहां के पेड़ पौधों पत्तों पुष्पों और लताओं से सुन्दरता प्राप्त की हो इसी कारण शकुन्तला के रूप लावण्य को देखकर दुष्यन्त कह उठता है –

अधर किसलय रागः कोमल विटप अनुकारिणी बाहू।
कुशमपि लोमनीयं यौवनमग्ड़ेषु सन्नद्वम।।

अभि.शा.(1/21)

उपरोक्त श्लोक से यह स्पष्ट होता है कि में मानव जीवन में प्रकृति का अधिक योगदान है, जो समस्त मानव जीवन के मार्ग को प्रसस्त करती है, एवं आदर्श उपस्थित करती है। महाकवि ने अभिज्ञान शाकुन्तलम् में प्रकृति को अत्यन्त सूक्ष्म एवं हृदयस्पर्शी के रूप में वर्णित किया है, क्योंकि शकुन्तला के विदाई के समय वन्य जीव पेड़ पौधो लताएं एवं आश्रम वासियों का हृदय विदारक वर्णन जो इस प्रकार है –

उद्गलितदर्भकवला मृग्यः परित्यक्तनर्तना मयूरा।
रततपाण्डुपत्रा मुञ्चन्त्यश्रूणीव लता।।

अभि.शा.(4–12)

शकुन्तला अब चली जायेगी इस कारण विरह में व्याकुल तपोवन के स्थावर एवं जंगम सभी प्राणियों का कारूणिक वर्णन प्रस्तुत है – अर्थात हरिणियां मुख में लिए हुए कुश के ग्रास को बिना चबाएं ही उगल रही हैं मयूरों ने नृत्य करना त्याग दिया है। अपने पीले पत्तों को गिराती हुयीं लताएं ऐसी प्रतीत हो रही हैं, मानो यह सारी प्रकृति अश्रु प्रवाहित कर रही हो। प्रकृति का मानव जीवन में आत्मीयता का इससे सुन्दर क्या उदाहरण प्रस्तुत किया जा सकता है। इतना ही नहीं जब कन्या अपनी ससुराल जाती है तो उसको आभूषण प्रदान किये जाते हैं महार्षि कण्व, पुत्री को पति के घर भेजने की तैयारी कर रहे है इसके लिए उसको आलंकारिक आभूषणों की आवश्यकता पड़ेगी। इस मांगलिक अवसर पर प्रकृति स्वरूपी माता ने पुत्री समान शकुन्तला को आभूषण प्रदान कराती है, जो निम्नवत हैं–

क्षौमं केनचिदिन्दुपाण्डु तरूणा माग्ड.ल्यमाविष्कृत,
निष्ठयूतश्चरणो सुलभो लाक्षा रसः केनचित।
अन्यभ्यो वनदेवता करतलैरापर्व भागोत्थिते –
देव्तान्यामरणानि तत्किसलयोद भेदप्रतिद्वन्द्वभिः।।

अभि.शा.(4–5)

महर्षि कण्व की पुत्री शकुन्तला की विदाई के अवसर पर पेड़ पौधों और वनस्पतियों शकुन्तला को अलग–अलग प्रकार के आभुषण प्रदान किये। किसी वृक्ष ने स्वच्छ चन्द्रमा के समान रेशमी वस्त्र प्रदान किये तो, किसी ने चरणों में लगाने के लिए मनोहर महावर निकाल के दिया, तो किसी ने कलाई तक उठे हुए सुन्दर किसलयो (कोपलों) को प्रतिस्पर्द्धा करने वाले वन देवता के करतलों से आभूषण प्रदान किये। यहां पर कवि ने प्रकृति को एक स्त्री के आभूषणों के रूप किस प्रकार वर्णित किया है जो अत्यन्त स्मरणीय है।

महर्षि कण्व के आश्रम में पली बढ़ी शकुन्तला पतिगृह के लिए प्रस्थान कर रही है, क्यो वृक्षों के द्वारा आभूषण प्रदान करना मृग के छौने के द्वारा शकुन्तला का आंचल पकड़ना सखियों और लताओं का अश्रुवर्षा आदि का वर्णन होता है, ऐसी अवस्था में महर्षि कण्व प्रकृति से शकुन्तला की विदाई की आज्ञा चाह रहे हैं जो इस भाँति है –

पातु न प्रथम व्यवस्पति जलंयुष्मास्वपीतेषु
नादत्ते प्रियमण्डनापि भवता स्नेहेनया पटलवम्।
आधे वः कुशुम प्रसूति समये यस्या भवत्युत्सव,
सेयंयादि शकुन्तला पतिगृह सवैरनुज्ञायताम्।।

अभि.शा.(4–9)

महर्षि कण्व वन देवताओं एवं तपोवन के वृक्षों में अपनी बात को व्यक्त करते हुए कहते हैं कि जो शकुन्तला तुमको जल पिलाये बिना जल नहीं ग्रहण करती थी, जो शकुन्तला पुष्प पल्लवों से बने आभूषणों की अनुरागिणी होने पर भी स्नेह के कारण नव किसलयो एवं कलियों को नहीं तोड़ती थी। जो आप लोगों के पहली बार पुष्पोत्पप्ति के समय उत्सव मनाया करती थी। वहीं शकुन्तला आज पतिगृह जा रही तो आप सभी उसे पतिगृह जाने की अनुमति प्रदान करें।

यहां पर प्रकृति को माता पिता और वृक्ष और लताओं को शकुन्तला के सगे सम्बन्धी के रूप में और शकुन्तला को पुत्री के रूप में चित्रित करके महाकवि ने प्रकृति और मनुष्यों के अतुलनीय सम्बन्ध को दर्शाया है।

जिस समय माता पिता अपनी पुत्री को पतिगृह भेजते हैं तो उस समय उसे आर्शीवाद प्रदान करते हैं। शकुन्तला को विदाई के समय आकाश के द्वारा आर्शीवाद प्रदान होता है जो इस प्रकार है–

रम्यान्तरः कमलिनीहरितैः सरोभिच्श्छायादुमैनिर्यामि तार्क,
भूयात् कुशेशयरजोमुदुरेणुरस्याः शान्तनुकूल पवनश्च।।

अभि.शा.(4/11)

''आकाश के द्वारा'' – पुत्री समान शकुन्तला को पिता तुल्य आकाश आर्शीवाद प्रदान करते हुए कहते हैं कि – हे शकुन्तले तुम्हारा मार्ग कमलनियों से हरे भरे तालाबों से मनोहर और मुग्धमयी हो छायादार वृक्षों से परिपूर्ण एवं सूर्य के किरणों की ताप से रहित हो, कमल के पराग के कणों से कोमल धूलि वाला हो, झंझावात (आंधी तूफान) से रहित हो शान्त और अनुकूल वायु से मन को मोहित करना हुआ सुखकारी हो। महाकवि का आशय है कि यदि मार्ग शान्त अनुकूल होगा तो यात्रा सुखपूर्वक व्यतीत होगी। आगे बताया जा रहा है कि जिस प्रकार मनुष्य अपने प्रियजनों से अधिक समय तक दूर नहीं रह पाते उसी प्रकार पशु पक्षी भी अपने प्रियजनों से दूर नहीं रह पाते क्योंकि यह चकवा–चकवी से छण भर के लिए एक दूसरे से अलग नहीं रह सकता उसी प्रकार यह शकुन्तला भी अपने पति दुष्यन्त से क्षण भर के लिए दूर नहीं रहना चाहती है जो निम्नवत श्लोक में दृष्टव्य है–

नलिनीपतन्तरिवमति सदृचरमपश्यन्त्यातुरा।
चकवा वाक्या रटति, दुष्कस्महं करामीति।।

अभि.शा.(4/वा./102)

कवि का एक श्लोक बंगला संस्करण में भी प्राप्त होता है, जिसमें सूर्य चन्द्रमा एवं पर्वतराज का भी कितना अनोखा वर्णन प्रस्तुत किया है–

पादन्सायं क्षितिध रगुरोर्मूर्धिन कृत्वा सुमेरोः
कान्तं येन क्षपिततमसा मध्ययं धाम विष्णोः।
सोऽयं चन्द्रपतति गगनादन्तपशेपैर्मयुरवै–
रत्यारू दिर्भवति महतामापपभ्रंश निष्टा।।

अर्थात् अन्धकार को नष्ट करके जो पवर्तराज सुमेरू की चोटी पर पैर रखकर भगवान विष्णु की बीचो बीच स्थान पर विराजमान हुआ

है, वहीं पर यह चन्द्रमा मानो अपनी शेष किरणों के साथ नीचे गिर रहा है। कहने का तात्पर्य है जिस प्रकार उदित होता हुआ सूर्य अन्धकार को नष्ट करता है, उसी प्रकार समस्त इस मानव जाति को भी प्रकृति को स्वच्छ व सुन्दर रखकर जीवन के अन्धकार को नष्ट कर जीवन को सुव्यवस्थित रूप प्रदान कर सकता है।
आगे कवि कहना चाहता है अपने किसी प्रियजन के दूर होने पर मन किस प्रकार व्यथित हो उठता है। अभिज्ञान शकुन्तलम के चतुर्थ अंक में देखा गया है कि एक ओर शकुन्तला अपने पति के वियोग में अत्यन्त दुखी है। तो दूसरी ओर चन्द्रमा के छुप जाने पर कुमुदनी की अवस्था भी अत्यन्त दयनीय है जो इस प्रकार है–

अन्तर्हितै शशिनि शवै कुमुद्वती में
दृष्टिं न नन्दयति संरमरणीय शोभा।
इष्ट प्रवास जनितान्यबलाजनस्य,
दुःखानि नूनमतिमात्र सुदुःसहानि।।

अभि.शा.(4/3)

उपर्युक्त श्लोक के माध्यम से यह बताया गया है जिस प्रकार मनुष्य अपने प्रिय जन वियोग अत्यन्त दुखी होता है। उसी प्रकार यह प्रकृति भी कष्ट का अनुभव करती है। क्योंकि इस परिवर्तनशील संसार में सम्पत्ति और विपत्ति आती जाती रहती हे। महाकवि भतृहरि ने भी अपने नीतिशतक में कहा है–

कस्यात्यन्तं सुखमुपनतं दुःखमेकान्ततो वा।
नीचैः गच्छति उपरि च चक्रनेमिक्रमेण।।

नीतिशतक्म्

यह जीवन एक चक्र की भांति है जिस प्रकार जब चक्र परिभ्रमण करता है तो कभी ऊपर का हिस्सा नीचे और नीचे का हिस्सा ऊपर होता है, उसी प्रकार मनुष्य के जीवन में सुख और दुख का आगमन होता रहता है। और ठीक उसी प्रकार प्रकृति रूपी परिवर्तन भी चक्र की भांति चलता रहता है नये, पत्तों पुष्पों और फलों का और पुराने पत्तों पुष्पों और फलों का गिरना ठीक उसी प्रकार चलता रहता है।
महाकवि कालिदास के महाकाव्य कुमार सम्भवम् का प्रारम्भ ही प्रकृति की रमणीयता से हुआ है – मंगलाचरण के रूप में उन्होंने पर्वतराज हिमालय का कितना अदभुत् गुणगान किया है जो इस प्रकार वर्णित है–

अस्युत्युत्तसयां दिशी देवात्मा
हिमालयो नाम नागाधिराज
पूर्वापरो तोयनिधीविगाह्य
स्थितः प्रथित्या इन मानदण्डः।।

कुमारसम्भवम् (1–1)

आगे कालिदास जी ने अपने प्रसिद्ध ग्रन्थों में प्रकृति और प्रेम का मधुर सम्बन्ध स्थापित किया है। मेघदूत खण्डकाव्य में यक्ष किस प्रकार अपनी प्रियतमा के अंगों की समानता प्रिय अंगुलता से की है तथा हिरणी के नेत्रों के समान उसके नेत्रों में कटाक्षों का अनुभव प्रतीत करता है, और उदित होते हुए चन्द्रमा का अति सजीवता से वर्णन किया है कि चन्द्रमा अपनी रात्रि रूपी प्रियतमा का किस प्रकार आलिंगन कर रहा है जो निम्नवत श्लोक में दृष्टयव्य है–

अड़गुलीभिरव केशसंचयं संनिग्रहय चतिमिर मरीचिभिः।
कुड़न्मलीकृत सरोजलोजन चुम्बतीव रजनी मुख शशी।।

कुमारसम्भवम् (6/63)

महाकवि ने प्रकृति के प्रत्येक अंग का कितनी सुकुमारता से वर्णन किया है बसन्त के आगमन पर प्रकृति में अपूर्व उल्लास था, सभी प्राकृतिक वस्तुओं में ऋतुराज की मादकता व्याप्त थी मनुष्य ही नहीं वृक्ष नदियांपुष्प और लताएं भी प्रेम से भाव विभोर उठा हैं। महाकवि ने कुमार सम्भवम् महाकाव्य के श्लोकों में बसन्त के समय का अतिमनोहर पूर्ण वर्णन किया है, इसमें प्रकृति के मानवीकरण दृष्टान्त का वर्णन निम्न श्लोक में दर्शाया गया है–

पर्याप्त पुष्पस्तबकस्तनाभ्यः।
स्फुरत्प्रबालोष्ठमनोहराभ्यः
ल्तावधूम्मस्तरवोऽत्यवायु
र्विनिम्नशाखाभुजबन्धनानि।।

कुमारसम्भवम् (3–39)

अर्थात् लतारूपी बन्धुओं से वृक्षरूपी पुरूषों ने कोमल शाखारूपी भुजाओं से आलिंगन प्राप्त किया। यहां पर प्रकृति और मनुष्य को सहोदर के रूप में सम्बन्ध स्थापित किया गया है।
कुमारसम्भवम् में तो कवि ने प्रकृति को पार्वती के स्मित सौन्दर्य के लिए पर्यावरणीय सुन्दरता का आश्रय प्राप्त किया है जो निम्न श्लोक के माध्यम से बताया गया है–

पुष्पं प्रवालोहितं यदि स्था –
युक्ताफलं वा स्फुटविदुमस्थम्।
ततोऽनुकुयादि विशदस्य तस्य
स्तामौष्ठपर्यस्रूचः स्मितस्य।।

कुमारसम्भवम् (1–41)

अर्थात् पार्वती जी के ताम्रवर्ण ओष्ठो पर स्मित की शुभ्र छटा की तुलना तभी की जा सकती है जब किसलय पर शुभ स्वेत पुष्प रखा है और मूंगे पर मोती रखा हो, यहां पर पार्वती जी के ओष्ठो की तुलना स्वेत पुष्प और मोती से की गयी है।
महाकवि कालिदास का मेघदूत तो प्रकृति चित्रण का सर्वोत्तम् ग्रन्थ है इसमें प्रत्येक श्लोक में प्रकृति की आशारूपी आत्मा रूपी वेदना का चित्रांकन किया गया है। जिसके अर्न्तगत संयत गम्भीर एवं प्रशास्त व्याकुलता का दर्शन पाठकगण को प्राप्त होते हैं जो इस प्रकार प्रकृति की अनोखी छटा के दर्शन भी दृष्टब्य है–

काले काले भवति भवतो यस्य संयोगमेत्य।
स्नेहत्यक्ति स्चिरविरहणं मुत्चतो वाष्पुमुष्णम्।।

पूर्व मेघ (12वां श्लोक)

महाकवि ने प्रकृति में मानवीय चेतना एवं क्रिया कलापों का अत्यन्त निपुणता पूर्वक एक दूसरे में समरोपित किया है, जिस प्रकार एक व्यक्ति अपने प्रिय मित्र के कष्ट के समय अपने आंसुओं को रोक नहीं पाता उसी प्रकार यह मेघ भी अपने सखा पर्वतराज से लम्बे अन्तराल के बाद मिलने पर गर्म अश्रु प्रवाहित करता हुआ प्रतीत होता है। यहां पर प्रकृति और मनुष्य का घनिष्ठ सम्बन्ध दृष्टिगोचर होता है।
मेघ के आगमन पर विरही यक्ष अत्यन्त व्याकुल हो उठता है, क्योंकि वह अपनी प्रेयसी से दूर है। वह अपनी प्रेयसी को प्राण धारण कराने के लिए और उसके असान्त मन को शान्त करने के

लिए अत्यन्त व्याकुल है और वह मेद्य को समझाता हुआ कहता है कि ठीक उसी प्रकार जिस प्रकार पर्वत मेघ से आगमन से पुष्पित कदम्बो के वृक्षों के समान प्रसन्न हो जाते हैं। और भोली भाली ग्राम वधुएं मेघ के आगमन पर प्रसन्नता पूर्वक हे मेद्य तुम्हें निहारती है, और वर्षा ऋतु के लिए लालायित हंस मेघ के सहयात्री बन जाते हैं, और गर्भाधान के लिए उत्सुक बालाकाएं, हे मेघ तुम्हारा सेवन करती है उसी प्रकार यक्षिणी भी मेरे आगमन की आशा में एक–एक दिन व्यतीत कर रही है जिसको कवि ने मेघदूत में इस प्रकार दर्शाया है–

आकैलासादिबसकिसलयच्छेदपाथेयवन्तः।
सपप्स्यन्ते नमसि भवतो राजहंसा सहाया।।

पू.मे. (11 श्लोक)

कहने का तात्पर्य है मेघों के आने पर ऐसा कोई प्राकृतिक परिवर्तन नहीं जो मानव जीवन को उद्देलित न करता हो।
मेघदूत में महाकवि ने बाह्य एवं आन्तरिक प्राकृति दोनों का ही अत्यन्त सूक्ष्म एवं मार्मिक चित्रण प्रस्तुत किया है। आम्रकूट के पर्वत पर काले काले मेघ और आस पास पके फलों से युक्त आम्र वृक्ष हैं। कवि ने यह कल्पना कि है कि मानो पृथ्वी पर विराजमान पर्वतराज और पर्वत पर आम्रवृक्ष पृथ्वी के स्तन के समान शोभा को धारण करने वाला है जो इस प्रकार है–

छन्नोपान्तः परिणतफलद्योतिभि काननामै,
स्त्वय्यारूढें शिखर स्मिग्धवेणीसवर्गे।
नूनं मासयत्मरमिथुनप्रक्षणीमायवस्था,
मध्ये श्याम स्तन इव भूव शोषविस्तारपाण्डु।।

पूर्व मेघ (18)

महाकवि ने प्रकृति एवं मनुष्य के एक नवीन और परम्परा पूर्ण ढंग से उनके परस्पर सम्बन्ध को उल्लिखित किया है।
आगे महाकवि कहते हैं कि एक ओर सूर्य की किरणों प्रचण्ड सी हो गयी है, चन्द्रमा शीतल लगने लगा है, प्राणियों के लगातार स्नान के कारण कुओं तालाबों का जल प्रायः समाप्ति की ओर है सन्ध्या का समय मनोहर लगने लगा है। और कार्य की तीव्रता समाप्त हो गयी है वर्षा ऋतु का आगमन शीघ्र ही आने वाला है ऐसा प्रतीत हो रहा है कि हे मेघ आपके आगमन से सम्पूर्ण प्रकृति मदमस्त होकर नृत्य कर रही हो इसका कितना मनोहर वर्णन मेघदूत में प्रस्तुत है जो निम्नवत है–

नीपं दृष्टवा हरितकपिशं कैसरैरर्द्धरूढै
रविभूर्तप्रथमामुकुलाः कन्दलीश्चानकंच्छम
जम्ध्वारण्येएवधिरभि गन्धमाधाय चोर्त्याः
सारग्ड़स्ते तजललवमुचः सूचचिएयन्ति मार्गम।।

पूर्व मेघ (21)

अर्थात् वर्षा जल के कारण पुष्पों से शुशोभित कदम्ब के वृक्ष पर भ्रमर मदमस्त होकर गुन्जन कर रहे है, प्रथम जल पाकर कोमल कदली को हिरण बड़े ही मन से खा रहे होंगे, और गजानन महाराज पहली वर्षा के कारण पृथ्वी से उत्पन्न होने वाली सोंधी सोंधी खुशबू को सूंध रहे होंगे। इस प्रकार तरह तरह की क्रियाओं को देखकर मेघ के गगन मार्ग का स्वतः पता चल जाता है कि प्रकृति का मनुष्य से और मनुष्य का प्रकृति से घनिष्ठ सम्बन्ध है यही कारण है कि वह प्रकृति के अन्तःकरण को प्रभावित करती है।

महाकवि कालिदास प्रकृति को प्रायः नायक और नायिका के रूप में देखते हैं क्योंकि मेघदूत में उज्जयिनी की ओर जाते हुए मेघ के मार्ग में पड़ने वाली निर्विन्ध्या नदी प्रेमिका की भांति अपने हाव भाव से मेघ को किस प्रकार अपनी ओर आकृष्ट करती है जो निम्नवत श्लोक में बताया गया है–

वीचिक्षभि क्षेभरत्ननितविहग श्रेणि काच्चीगुणायाः
ससर्पत्याः स्खलितसुभगं दर्शतावर्ननाभेः
निविन्ध्यायाः पथिभव रसाभ्यंतरः संनिपत्य
स्त्रीणामाधंप्रणयवचनं विभ्रमो हि प्रयेणु

पूर्व मेघ (29 श्लोक)

अर्थात् मेघ को नायक तथा निर्विन्ध्या नदी को नायिका बताया गया है जिस प्रकार नायिका के कमर पर बंधी हुयी करधनी झनझन करती हुयी कामोद्दीपक मानी जाती है उसी प्रकार यहां निर्विन्ध्या नदी तरंगों के माध्यम से भंवर रूपी नाभि तथा पक्षियों की पंक्तियां निर्विन्ध्या नदी के करधनी मानी गयी है। क्यों कि जिस प्रकार नायिका कमर की करधनी से झंकार बढ़ाकर मदमाती चाल से बार बार नाभि प्रदर्शन द्वारा नायक को प्रणय निमन्त्रण देती है, उसी प्रकार निर्विन्ध्या भी तरंगो के चलने से शब्द करते हुए पंक्षियों को पंक्तिया से पत्थरों पर लड़खड़ा कर बहने अर्थात मदमाती चाल से तथा बार बार भंवरों के प्रदर्शन से अपने नायक मेघ को प्रणय का निमन्त्रण दे रही है।
मेघदूत गीतकाव्य में महाकवि ने सहानुभूतिपूर्ण भावना का भी अत्यन्त ही मर्म पूर्वक वर्णन प्रस्तुत किया है, क्योंकि यक्ष जब अपनी प्रिया यक्षिणी से अलग होकर कुबेर के शाप के कारण रामगिरी पर्वत पर रहता है, और अपनी प्रियतम की याद में अत्यन्त व्यथित मन से याक्षिणी के आलिंग्डन के लिए सून्य आकाश में अपनी दोनों भुजाओं फैलाता है तो उसकी इस दशा को देखकर वनस्थली देवी देवताओं के आंखों से आंसू झलक पड़ते है, कवि ने इसका कितना हृदयपर्शी वर्णन प्रस्तुत किया है जो इस प्रकार है–

मामाकाशप्रणहित भुजं निर्दयाश्लेषहेतो–
र्लब्धायास्ते कथमपि मयास्वप्नसंदर्शनेषु।
पश्यन्तीनां न खलु बहुशो न स्थली देवताना
मुक्तास्थूलास्तरू किसलयेएवश्रुलेशाःपतन्ति।।

उ.मे.(46)

इस प्रकार महाकवि ने मेघदूत में मानवीय सौन्दर्य की तुलना प्राकृतिक सौन्दर्य से की गयी है यक्ष मेघ को समझाता हुआ अपनी प्रिया यक्षिणी को संदेश भेजता है जो इस प्रकार है–

श्यामास्वगड. चकितहारिणीप्रेक्षणे दृष्टिपात,
वस्त्रच्छायां शशिनि शिखिनां बर्हभारेषुकेशान्।
उत्पश्यामि प्रतनुषु नदीवीचिषु भूविलास्नान्,
हन्तैकस्मिन् क्वचिदपि न ते चण्डि शादृश्यमस्ति।।

उ.म्र. (44)

अर्थात् हे यक्षिणी प्रियन्गागु लताओं में (तेरे शरीर की) भयभीत हुई हरिणियों की चितवन में तेरे मुख की कान्ति मयूरी के पंखों में तेरे केशों की कान्ति की नदियों में उठती हुयी हल्की–हल्की तरंगों में तेरे भूभृग्डों की कल्पना किया करता है परन्तु दुःख है कि हे क्रोध करने वाली किसी भी एक (वस्तु) में तेरी समानता नहीं है।
महाकवि कालिदास के रघुवंश महाकाव्य में गंगा यमुना के संगम

का वर्णन अत्यन्त ही प्रभावपूर्ण भावना से प्रस्तुत किया गया है जो इस प्रकार है–

क्वचिच्च कृष्णोरगभेषणेष,
भस्माग्डरागा तनुरीश्वरस्य।
पश्यानवद्याडि. विभाति गग्ड,ा
भिन्नप्रवाहा यमुनात्तरगडै।।

रघुवंशम् (13/57)

अर्थात् यमुना की तरंगों से संस्लिलिष्ट गंगा इस प्रकार शोभायमान हो रही है मानो साक्षात् शिव की मूर्ति हो जो एक ओर कृष्ण शर्पो से वेष्टित हो और दूसरी ओर भस्प लेप से अलंकृत है, यहां पर किस प्रकार से गंगा–यमुना नदी की तुलना भगवान शिव से की गयी जो कि प्रकृति का अविस्मरणी वर्णन है।

उपसंहार

अतः स्पष्ट होता है कि महाकवि कालिदास की आंखें मानो परदर्शी प्रिज्म के समान है जो जीवन के सभी रंगों की पहचान कर लेती हैं। और उनका मस्तिष्क कलाकार की भांति रंग मिलाने वाली पटरी के समान उन्हें ग्रहण कर रत्नरूपी सौन्दर्य को चित्रण कर अनुदित कर देता हैं।

कालिदास ने प्रकृति को अनेकों रूपों में प्रस्तुत किया है उनके अनुसार प्रकृति मानव की चिरन्तन सहचरी रही हो, और मनुष्य के स्वस्थ्य सरस एवं सुदृढ़ मौलिक जीवन के लिए अपरिहार्य हो। यद्यपि महाकवि को प्रकृति का सुन्दर और सुकोमल रूप मनभावन है, इसलिए महाकवि कालिदास जी को ''मानव जीवन'' एवं ''प्रकृति का कवि'' कहा जाये तो असंगत न होगा।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची

1. डा. कपिल देव द्विवेदी : अभिज्ञान शाकुन्तलम् : रामनरायण लाल विजय कुमार कटरा रोड इलाहाबाद : पेज नं. 68–69।
2. डा. विजेन्द्र कुमार शर्मा : मेघदूतम् : साहित्य भण्डार, सुभाष भण्डार मेरठ : पेज नं. 24–25।
3. डा. कपिल देव द्विवेदी : अभिज्ञान शाकुन्तलम् : रामनरायण लाल विजय कुमार कटरा रोड इलाहाबाद : पेज नं. 39–43।
4. डा. राजदेव मिश्रा : अभिज्ञान शाकुन्तलम् : सीमा प्रेस ईश्वर गंगी इलाहाबाद : पेज नं. 99–100।
5. डा. अजय कुमार आचार्य : अभिज्ञान शाकुन्तलम् : कैला देवी पब्लिकेशन्स शिकोहाबाद : पेज नं. 44–51।
6. डा. कपिल देव द्विवेदी : अभिज्ञान शाकुन्तलम् : रामनरायण लाल विजय कुमार कटरा रोड इलाहाबाद : पेज नं. 205–213।
7. डा. अजय कुमार आचार्य : अभिज्ञान शाकुन्तलम् : कैला देवी पब्लिकेशन्स शिकोहाबाद : पेज नं. 42–43।
8. डा. अजय कुमार आचार्य : अभिज्ञान शाकुन्तलम् : कैला देवी पब्लिकेशन्स शिकोहाबाद : पेज नं. 193–194।
9. डा. अजय कुमार आचार्य : अभिज्ञान शाकुन्तलम् : कैला देवी पब्लिकेशन्स शिकोहाबाद : पेज नं. 26–27।
10. सत्यकाम विद्यालंकार : नितिशतकम् : जोरबाग नई दिल्ली।
11. आचार्य उमेश शास्त्री : कुमार सम्भवम् : चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी : पेज नं. 49।
12. आचार्य उमेश शास्त्री : कुमार सम्भवम् : चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी : पेज नं. 19।
13. आचार्य उमेश शास्त्री : कुमार सम्भवम् : चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी : पेज नं. 43।
14. डा. विजेन्द्र कुमार शर्मा : मेघदूतम् : साहित्य भण्डार, सुभाष भण्डार मेरठ : पेज नं. 36–37।
15. नेट : मेघदूतम् : 17/02/17।
16. डा. विजेन्द्र कुमार शर्मा : मेघदूतम् : साहित्य भण्डार, सुभाष भण्डार मेरठ : पेज नं. 47–48।
17. डा. विजेन्द्र कुमार शर्मा : मेघदूतम् : साहित्य भण्डार, सुभाष भण्डार मेरठ : पेज नं. 44–46।
18. डा. कपिल देव द्विवेदी : संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास : रामनरायण लाल विजय कुमार कटरा रोड इलाहाबाद : पेज नं. 161–163।
19. प्रो. बृजभूषण श्रीवास्तव : मेघदूतम् : क्वनपुर पब्लिसिंग होम कानपुर : पेज नं. 32।
20. डा. कपिल देव द्विवेदी : अभिज्ञान शाकुन्तलम् : रामनरायण लाल विजय कुमार कटरा रोड इलाहाबाद।
21. डा. अजय कुमार आचार्य : अभिज्ञान शाकुन्तलम् : कैला देवी पब्लिकेशन्स शिकोहाबाद।
22. डा. राज देव मिश्रा : अभिज्ञान शाकुन्तलम् : सीमा प्रेस – ईश्वर गंगी वाराणसी।
23. डा. शिव बालक द्विवेदी : अभिज्ञान शाकुन्तलम् : मेस्टन रोड कानपुर।
24. डा. कृष्णकान्त त्रिपाठी : अभिज्ञान शाकुन्तलम् : कानपुर पब्लिसिंग होम कानपुर।
25. डा. विजेन्द्र कुमार : मेघदूतम् : सहित्य भण्डार सुभाष भण्डार मेरठ।
26. प्रो. ब्रज भूषण : मेघदूतम् : कानपुर पब्लिसिंग होम कानपुर।
27. आचार्य उमेश शास्त्री : कुमार सम्भवम् : चौखम्बा प्रकाशन वाराणसी।
28. डा. कपिल देव द्विवेदी : संस्कृत साहित्य का समीक्षात्मक इतिहास : रामनरायण लाल विजय कुमार कटरा रोड इलाहाबाद।
29. सत्यकाम विद्यालंकार : नीतिशकार : जोरबाग नई दिल्ली।